International Journal of Scientific Research in Engineering and Management (IJSREM)
Volume: 09 Issue: 07 | July - 2025 SJIF Rating: 8.586 ISSN: 2582-3930

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु : दलित-बहुजन चेतना के पुरोधा

अभिषेक आनंद
शोध छात्र
पंजीयन संख्या : 286/2020
स्नातकोत्तर अंबेडकर विचार एवं समाज कार्य विभाग
ति. मां. भा. वि. वि. भागलपुर

सारांश

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु भारतीय समाज में सामाजिक न्याय, समता और आत्मसम्मान की चेतना को जगाने वाले एक प्रखर समाजचेतक चिंतक और दलित चेतना के पुरोधा थे। उन्होंने न केवल बहुजन दलित समाज के शोषण, दमन और वंचना के विरुद्ध आवाज़ उठाई, बल्कि उनके ऐतिहासिक गौरव और सांस्कृतिक विरासत को पुनर्स्थापित करने का कार्य भी किया। उनका चिंतन दलितों को एक नई पहचान, आत्मविश्वास और संघर्ष की दिशा प्रदान करता है। जिज्ञासु का जन्म ऐसे समय में हुआ था जब भारतीय समाज कठोर जातिवाद, छुआछूत और ब्राह्मणवादी वर्चस्व से ग्रस्त था। उन्होंने इस सामाजिक असमानता के विरुद्ध कलम को हथियार बनाकर संघर्ष किया। उनकी रचनाएँ – *आदि निवासियों की सभ्यता'*, लोकशाही बनाम ब्राह्मणशाही' *'मोहिनी विद्या'*, *'पिछड़ा वर्ग कमीशन की रिपोर्ट'* *'ईश्वर और गुड़डे'*, *'संत प्रवर रैदास'*, *'रावण और उसकी लंका'*, नारी जीवन की कहानी ऐतिहासिक मिथकों को तोड़ते हुए दलित बहुजनों के गौरवपूर्ण अतीत को सामने लाती हैं। उन्होंने इतिहास लेखन को सवर्ण वर्चस्व से मुक्त कर एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया, जिसमें दलितों की भूमिका और योगदान को प्रमुखता दी गई। चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु केवल लेखक ही नहीं, बल्कि समाज सुधारक भी थे। उन्होंने शिक्षा, संगठन और बौद्धिक जागरूकता को दलित बहुजन समाज की मुक्ति का साधन माना। उनका मानना था कि जब तक दलित अपने अतीत को नहीं जानेंगे और अपनी अस्मिता पर गर्व नहीं करेंगे, तब तक वे आत्मनिर्भर और स्वतंत्र नहीं बन सकते। जिज्ञासु डॉ. आंबेडकर से प्रभावित थे, परंतु उन्होंने अपनी स्वतंत्र दृष्टि को भी कायम रखा। उन्होंने बौद्ध धर्म को सामाजिक मुक्ति का माध्यम मानते हुए नवबौद्ध आंदोलन में सक्रिय भागीदारी की और दलित बहुजनों को धार्मिक और सांस्कृतिक रूप से जागरूक बनाने का प्रयास किया।

आज के सामाजिक और राजनीतिक संदर्भ में चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु की वैचारिक धारा और लेखनी अत्यंत प्रासंगिक है। उनका चिंतन हमें यह सिखाता है कि सामाजिक परिवर्तन के लिए केवल राजनीतिक शक्ति नहीं, बल्कि वैचारिक और सांस्कृतिक क्रांति भी आवश्यक है। वे एक ऐसे चिंतक थे जिन्होंने दलित समाज को चेतना, इतिहास और स्वाभिमान का स्वर दिया। उनका जीवन और कृतित्व आज भी सामाजिक न्याय और समानता की राह में एक प्रेरणास्त्रोत के रूप में जीवित है।

मूल शब्द (Keywords) :दलित चेतना,समाज सुधारक,इतिहास लेखन,आत्मसम्मान,नवबौद्ध आंदोलन,सामाजिक न्याय,जाति उन्मूलन,वैकल्पिक इतिहास,बौद्धिक जागरूकता,शोषण और वंचना,ब्राह्मणवाद विरोध,दलित साहित्य,सामाजिक समता

साहित्य समीक्षा :

इन पुस्तकों की साहित्य समीक्षा करते हुए हम यह देख सकते हैं कि दलित बहुजन समाज और उनके संघर्षों को समझने के लिए चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु और उनके समकालीन लेखकों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। **चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु, "दलितों का भविष्य" (1985):** इस पुस्तक में जिज्ञासु ने दलितों की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थिति का गहरा विश्लेषण किया है। उन्होंने दलितों के उत्पीड़न और उनके भविष्य की दिशा पर विचार किया, साथ ही उनके अधिकारों की रक्षा के लिए विभिन्न उपाय सुझाए। यह पुस्तक दलितों के अधिकारों और उनके सशक्तिकरण पर ध्यान केंद्रित करती है। **अजय नवल, "दलित साहित्य का इतिहास" (2004):** इस पुस्तक में नवल ने दलित साहित्य के विकास की प्रक्रिया और इसके विभिन्न आयामों का विस्तार से अध्ययन किया है। उन्होंने भारतीय समाज में जातिवाद और उसके प्रभावों को बारीकी से समझाया और दलित साहित्य के योगदान को रेखांकित किया। यह पुस्तक दलित साहित्य के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण मानी जाती है। **चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु ग्रंथावली, खंड-1 (2017):** इस ग्रंथावली में जिज्ञासु के विचारों का संग्रह किया गया है, जो दलित साहित्य और इतिहास लेखन में उनके दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हैं। इसके माध्यम से यह दिखाया गया है कि कैसे जिज्ञासु ने दलित समाज के इतिहास को एक वैकल्पिक दृष्टि से प्रस्तुत किया। **डॉ. सुभाष कश्यप, "भारतीय संविधान और सामाजिक न्याय" (2010):** इस पुस्तक में भारतीय संविधान में दलितों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए सुनिश्चित किए गए सामाजिक न्याय के प्रावधानों की व्याख्या की गई है। कश्यप ने संविधान के अंतर्गत दलितों के अधिकारों की रक्षा की दिशा में उठाए गए कदमों का विश्लेषण किया है। **राहुल संकृत्यायन, "जाति व्यवस्था और भारतीय समाज" (2015):** इस पुस्तक में संकृत्यायन ने भारतीय समाज में जाति व्यवस्था के प्रभाव और उसके ऐतिहासिक संदर्भ में गहरे अध्ययन किए हैं। यह पुस्तक जातिवाद के उन्मूलन के लिए जरूरी विचारधाराओं को प्रस्तुत करती है।

इन सभी पुस्तकों में दलित समाज, उनके संघर्ष, साहित्य और अधिकारों की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित किया गया है। जिज्ञासु और अन्य लेखकों ने इस विमर्श को गहराई से समझने के लिए एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रदान किया है।

शोध उद्देश्य एवं परिकल्पना :

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु भारतीय दलित साहित्य और समाज की जागरूकता के प्रमुख हस्ताक्षर थे। उनका उद्देश्य दलितों की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थिति को समझने और उन्हें मुख्यधारा समाज में समान दर्जा दिलाने के लिए आवाज़ उठाना था। इस शोध का उद्देश्य जिज्ञासु के दलित चेतना के

विकास में योगदान को विश्लेषित करना है, साथ ही उनके विचारों और लेखन को समाज के सुधारवादी दृष्टिकोण से समझना है।

परिकल्पना यह है कि चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का साहित्य और बौद्धिक विमर्श दलित समाज के लिए एक सशक्त संघर्ष की प्रेरणा बना और उनके विचारों ने भारतीय समाज में जातिवाद, सामाजिक भेदभाव और असमानता के खिलाफ एक व्यापक चेतना का निर्माण किया। उनके कार्यों में दलितों की पहचान, अधिकार और सामाजिक न्याय की बुनियादी जरूरतों को प्राथमिकता दी गई।

अनुसंधान पद्धति और डेटाबेस :

इस शोध में चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु के साहित्य और उनके बौद्धिक योगदान का विश्लेषण गुणात्मक अनुसंधान पद्धति के माध्यम से किया गया है। शोध में मुख्य रूप से उनके लेखों, पुस्तकों और भाषणों का विश्लेषण किया गया है, जो दलित चेतना और समाज सुधार के संदर्भ में महत्वपूर्ण हैं। इन स्रोतों से प्राप्त जानकारी को ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भ में परखा गया है। साथ ही, जिज्ञासु के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन अन्य दलित चिंतकों और समाज सुधारकों से भी किया गया है।

डेटाबेस में जिज्ञासु के ग्रंथावली, उनके द्वारा प्रकाशित प्रमुख कृतियां, दलित साहित्य पर आधारित साहित्यिक लेख और शैक्षिक पत्रिकाओं का समावेश है। इसके अलावा, सरकारी दस्तावेज़, शोध पत्रिकाएँ और विश्वविद्यालयों द्वारा प्रकाशित शोध कार्यों का उपयोग भी इस अध्ययन में किया गया है।

प्रस्तावना :

भारतीय समाज सदियों से सामाजिक विषमता, जातिवाद और ब्राह्मणवादी संरचना की जटिलताओं में जकड़ा रहा है। इन संरचनाओं ने विशेष रूप से दलित वर्ग को सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से वंचित और हाशिए पर डाल दिया। ऐसे समय में कुछ युगद्रष्टा चिंतकों ने इस शोषणकारी व्यवस्था के विरुद्ध आवाज़ उठाई और दलित बहुजन चेतना को जागृत करने का प्रयास किया। चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु ऐसे ही एक प्रखर समाजचेतक चिंतक और दलित चेतना के पुरोधा थे, जिन्होंने न केवल लेखनी के माध्यम से, बल्कि वैचारिक क्रांति के जरिए भी दलित समाज को आत्म-सम्मान और सामाजिक न्याय की ओर प्रेरित किया। जिज्ञासु का चिंतन सामाजिक यथार्थ की ज़मीन से जुड़ा हुआ था। उन्होंने इतिहास लेखन में दलितों की भूमिका को उजागर करते हुए उस एकपक्षीय इतिहास को चुनौती दी, जो ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण से प्रेरित था। उनकी रचनाएँ जैसे *आदि निवासियों की सभ्यता'*, लोकशाही बनाम ब्राह्मणशाही' *'मोहिनी विद्या'*, *'पिछड़ा वर्ग कमीशन की रिपोर्ट'* *'ईश्वर और गुड़डे'*, *'संत प्रवर रैदास'*, *'रावण और उसकी लंका'*, नारी जीवन की कहानी ऐतिहासिक मिथकों के पुनर्पाठ का प्रयास थीं, जिनके माध्यम से उन्होंने दलित समाज को उसका खोया हुआ गौरव लौटाने की कोशिश की। चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु न केवल लेखक या इतिहासकार थे, बल्कि एक जागरूक समाज सुधारक भी थे। उन्होंने शिक्षा को सामाजिक मुक्ति का सबसे प्रभावशाली माध्यम माना और दलित समाज में जागरूकता

फैलाने का कार्य किया। डॉ. आंबेडकर से प्रेरणा लेते हुए उन्होंने नवबौद्ध आंदोलन में सक्रिय भागीदारी की और बौद्ध धर्म को शोषणमुक्त, समतामूलक व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत किया।

वर्तमान समय में जब सामाजिक असमानता और जातिगत भेदभाव अब भी विद्यमान हैं, तब जिज्ञासु का विचार और दृष्टिकोण और अधिक प्रासंगिक हो जाता है। यह शोध आलेख उनके जीवन, चिंतन और कृतित्व के माध्यम से यह विश्लेषण करता है कि कैसे उन्होंने दलित समाज को आत्म-चेतना, इतिहास बोध और सामाजिक स्वाभिमान की दिशा दी और एक वैकल्पिक सामाजिक विमर्श की नींव रखी।

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का बौद्धिक विकास:

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का बौद्धिक विकास उनके जीवन अनुभवों, सामाजिक स्थितियों और स्वाध्याय से निर्मित हुआ था। एक दलित पिछड़ी जाति के कलवार परिवार में जन्म लेने के कारण उन्होंने बाल्यकाल से ही छुआछूत, सामाजिक भेदभाव और अपमान का सामना किया। शिक्षा प्राप्त करने की प्रक्रिया में उन्हें जिन कठिनाइयों से गुजरना पड़ा, उसने उनके भीतर प्रश्न करने की क्षमता और अन्याय के विरुद्ध खड़े होने की चेतना को जन्म दिया। उन्होंने समझा कि जातिगत उत्पीड़न केवल सामाजिक व्यवहार की समस्या नहीं है, बल्कि यह एक संरचित प्रणाली है, जिसे धार्मिक और सांस्कृतिक आधारों पर वैधता प्रदान की गई है, यही अनुभव उनके बौद्धिक विकास की नींव है। [1] दलित समाज की दशा–शैक्षिक पिछड़ापन, सांस्कृतिक हीनता का बोध और आत्मगौरव का अभाव–ने जिज्ञासु को भीतर तक झकझोर दिया। उन्होंने देखा कि समाज का बड़ा तबका अपने गौरवपूर्ण अतीत से अनभिज्ञ है और ब्राह्मणवादी ढांचे द्वारा थोपी गई हीन मानसिकता को ही अपनी नियति मान बैठा है। इस स्थिति ने जिज्ञासु को इतिहास के पुनर्पाठ और आत्मसम्मान आधारित वैकल्पिक विमर्श की ओर प्रेरित किया। ब्राह्मणवादी संरचना के विरुद्ध जिज्ञासु की सोच किसी तात्कालिक आवेश की उपज नहीं थी, बल्कि यह गहन अध्ययन और अनुभव की उपज थी। उन्होंने वेदों, पुराणों और धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन किया और यह स्थापित करने का प्रयास किया कि भारतीय समाज में जाति आधारित भेदभाव एक कृत्रिम सामाजिक संरचना है, जिसे सत्ता के संरक्षण हेतु गढ़ा गया है। उन्होंने अपने लेखन में बार-बार इस बात को स्पष्ट किया कि तथाकथित आर्य बाहरी आक्रांता थे, जिन्होंने मूलनिवासी समाज को दबाया, शोषित किया और उन्हें हीनता के गर्त में धकेल दिया। डॉ. भीमराव आंबेडकर के विचारों और आंदोलन से जिज्ञासु अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्होंने आंबेडकर के सामाजिक न्याय और समानता के सिद्धांतों को आत्मसात करते हुए, उन्हें अपने लेखन और वैचारिक विमर्श का आधार बनाया।[2] आंबेडकर के समान ही जिज्ञासु ने भी शिक्षा, संगठन और आत्मगौरव को दलित मुक्ति का मूल साधन माना। आंबेडकर के बौद्ध धर्म स्वीकार करने से पहले ही जिज्ञासु ने बौद्ध धर्म में सामाजिक मुक्ति की संभावनाओं को पहचान लिया था। उन्होंने बौद्ध धर्म को उस सांस्कृतिक और धार्मिक व्यवस्था के रूप में देखा जो जातिगत भेदभाव का विरोध करती है और मानव समानता पर बल देती है। जिज्ञासु ने बौद्ध धर्म को दलितों की आत्मगौरवपूर्ण सांस्कृतिक परंपरा के रूप में प्रस्तुत किया। उनके लिए यह केवल धार्मिक विकल्प नहीं था, बल्कि सामाजिक विद्रोह और पुनर्जागरण का मार्ग था। उन्होंने नवबौद्ध आंदोलन में सक्रिय भागीदारी की और 'धम्म' को दलित समाज की चेतना का नया आधार बनाने का प्रयास किया।

इस प्रकार, चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का बौद्धिक विकास एक सामाजिक यथार्थ की कोख से जन्मी चेतना थी, जिसने अध्ययन, अनुभव और संघर्ष से आकार लिया और दलित मुक्ति आंदोलन को एक वैचारिक आधार प्रदान किया।

दलित –बहुजन चेतना का स्वर और उसका विकास:

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का लेखन दलित चेतना के स्वर और उसके वैचारिक विकास का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। उन्होंने जिस दौर में कलम उठाई, वह समय भारत के सामाजिक इतिहास में गहरी जातिगत असमानताओं, छुआछूत, सामाजिक बहिष्कार और सांस्कृतिक अपमान से भरा हुआ था। जिज्ञासु ने अपने लेखन के माध्यम से दलितों के इतिहास, अस्मिता और आत्मगौरव की पुनर्परिभाषा करते हुए एक समतामूलक समाज के स्वप्न को आकार दिया। सबसे पहले, उन्होंने इतिहास लेखन की उस परंपरा को चुनौती दी जो ब्राह्मणवादी वर्चस्व और सवर्ण केंद्रित दृष्टिकोण से प्रेरित थी।[3] उन्होंने यह तर्क प्रस्तुत किया कि भारत के तथाकथित "नीच" समझे जाने वाले समुदाय वास्तव में इस देश के मूलनिवासी हैं, जिनका गौरवशाली अतीत रहा है। जिज्ञासु की रचनाएँ – *आदि निवासियों की सभ्यता'*, लोकशाही बनाम ब्राह्मणशाही' *'मोहिनी विद्या'*, *'पिछड़ा वर्ग कमीशन की रिपोर्ट' 'ईश्वर और गुड़डे'*, *'संत प्रवर रैदास'*, *'रावण और उसकी लंका'*, नारी जीवन की कहानी जैसी रचनाएं इस ऐतिहासिक मिथक को तोड़ती हैं कि ब्राह्मण और आर्य समाज भारत की मूल संस्कृति के वाहक हैं।[4] उन्होंने यह स्थापित किया कि दलित समाज न केवल भारत की मूल संस्कृति से जुड़ा है, बल्कि उसकी सभ्यता और नैतिकता के वास्तविक उत्तराधिकारी भी हैं। इस ऐतिहासिक पुनर्पाठ का उद्देश्य दलित समाज में आत्मसम्मान और स्वाभिमान की भावना को पुनर्जीवित करना था। जिज्ञासु ने बार-बार यह रेखांकित किया कि जब तक दलित समाज अपने अतीत को जानकर उस पर गर्व नहीं करेगा, तब तक वह मानसिक दासता से मुक्त नहीं हो सकता। उन्होंने शिक्षा को चेतना का माध्यम और लेखन को संघर्ष का हथियार बनाया। उनके साहित्य का उद्देश्य केवल जानकारी देना नहीं था, बल्कि दलितों को मानसिक रूप से स्वतंत्र बनाना और उन्हें संघर्ष के लिए तैयार करना था। जिज्ञासु का लेखन आत्मसम्मान की एक संस्कृति का निर्माण करता है। उन्होंने 'गुलामी की संस्कृति' के स्थान पर 'सम्मान की संस्कृति' को स्थापित करने का प्रयास किया। उनके लेखों में बार-बार यह बात उभरती है कि दलितों को सिर्फ सामाजिक दया या रियायत की नहीं, बल्कि **न्याय और अधिकार** की आवश्यकता है। उन्होंने सामाजिक न्याय को केवल राजनीतिक दायरे में नहीं रखा, बल्कि उसे सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भों से जोड़कर एक व्यापक विमर्श बनाया। जाति उन्मूलन जिज्ञासु के विचारों की केंद्रीय धुरी है। उनका मानना था कि जाति व्यवस्था केवल सामाजिक असमानता नहीं है, बल्कि यह एक *मानव विरोधी व्यवस्था* है, जिसे समाप्त करना अनिवार्य है। उन्होंने बौद्ध धर्म को जातिविहीन और समतामूलक धर्म के रूप में प्रस्तुत किया और बताया कि यह धर्म उन सभी मूल्यों को आत्मसात करता है, जो सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए आवश्यक हैं।[5] बौद्ध विचारधारा को अपनाकर

उन्होंने न केवल वैचारिक विकल्प प्रस्तुत किया, बल्कि सांस्कृतिक आत्मनिर्भरता की ओर भी कदम बढ़ाया। जिज्ञासु की कल्पना का समाज ऐसा था जहाँ व्यक्ति की पहचान जाति से नहीं, बल्कि उसके कर्म, ज्ञान और नैतिकता से हो। उन्होंने एक ऐसे भारत का स्वप्न देखा जिसमें सामाजिक न्याय केवल संविधान की धारा नहीं, बल्कि समाज की जीवन पद्धति हो। उनके विचार आज भी प्रासंगिक हैं, जब जाति आधारित भेदभाव अभी भी विभिन्न रूपों में समाज में मौजूद है।

इस प्रकार, चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का लेखन दलित चेतना का वह स्वर है, जो आत्मगौरव, ऐतिहासिक पुनरुद्धार और सामाजिक न्याय की त्रिधारा में बहता है। उनका विचार हमें न केवल अतीत की पुनर्रचना का साहस देता है, बल्कि भविष्य की दिशा में न्याय और समता पर आधारित समाज की परिकल्पना भी करता है।

साहित्यिक योगदान और विचारधारा

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का साहित्यिक योगदान भारतीय दलित आंदोलन और वैकल्पिक इतिहास लेखन की दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनका लेखन केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का औजार था। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से न केवल दलित अस्मिता को स्वर दिया, बल्कि उस इतिहास को भी पुनर्लिखा जिसे लंबे समय तक ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया था। उनकी प्रमुख रचनाओं में *आदि निवासियों की सभ्यता'*, लोकशाही बनाम ब्राह्मणशाही' *'मोहिनी विद्या'*, *'पिछड़ा वर्ग कमीशन की रिपोर्ट'* *'ईश्वर और गुड़डे'*, *'संत प्रवर रैदास'*, *'रावण और उसकी लंका'*, नारी जीवन की कहानी, बाबा साहब का उपदेश अत्यंत चर्चित हैं। इतना ही जिज्ञासु ने आंबेडकर के मूल साहित्य का भी अनुवाद कराया। इसमें *'जाति भेद का उच्छेद'* (1964), *'अछूत कौन और कैसे'* (1967), *'शूद्रो की खोज'* (1968) *'कांग्रेस और गांधी ने अछूतों के लिए क्या किया'* (1969), *'अछूतोंं की मुक्ति और गांधी जी'* (1966), *'भारत में जातिवाद'* (1972) जैसी महत्वपूर्ण किताबें शामिल हैं। उन्होंने 1972 में *पेरियार ई.वी. रामासामी नायकर* शीर्षक से उन पर लिखी अंग्रेजी पुस्तक *'ए पैन पोट्रेट. फिलॉसफी, सोशल रिफार्म एंड सोशल रिव्योल्यूशन'* का अनुवाद भी प्रकाशित कराया।[6] जिज्ञासु ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि भारत के मूल निवासी दलित, आदिवासी और पिछड़े वर्ग के लोग हैं, जिन्हें आर्य आक्रमणकारियों ने सत्ता से बेदखल कर दिया और सामाजिक सीढ़ी के सबसे निचले पायदान पर धकेल दिया। इस ग्रंथ में उन्होंने जातिगत उत्पीड़न की ऐतिहासिक जड़ों की पड़ताल की और दलित समाज को अपने अतीत पर गर्व करना सिखाया। *अपनी रचनाओं एवं साहित्यिक कार्यों में* उन्होंने भारत के इतिहास को एक वर्ग-संघर्ष और सामाजिक न्याय के परिप्रेक्ष्य से देखा। उन्होंने यह दिखाया कि भारत का इतिहास केवल राजाओं और ब्राह्मणों का नहीं है, बल्कि मेहनतकश और वंचित समुदायों के संघर्ष का इतिहास भी है। उन्होंने जाति व्यवस्था के वैदिक और पौराणिक स्रोतों की आलोचना करते हुए यह स्पष्ट किया कि आर्य संस्कृति दलित समाज की संस्कृति नहीं है, बल्कि एक शोषक संस्कृति है। जिज्ञासु का इतिहास लेखन एक वैकल्पिक दृष्टिकोण का निर्माण करता है। वे इतिहास को केवल तथ्यों का संग्रह नहीं मानते थे, बल्कि उसे एक वैचारिक उपकरण के रूप में देखते थे, जिससे वर्तमान की

सामाजिक चेतना को दिशा दी जा सकती है। उनके लेखन में दलितों की भूमिका को केन्द्रीय स्थान दिया गया है। उन्होंने यह प्रयास किया कि दलितों को केवल पीड़ित नहीं, बल्कि संघर्षशील, सृजनशील और जागरूक सामाजिक शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया जाए। उनकी लेखन शैली सरल, प्रवाहमयी और जनसुलभ थी। उन्होंने संस्कृतनिष्ठ जटिल भाषा का परित्याग कर आमजन की समझ में आने वाली भाषा को अपनाया। उनके लेखन में भावनात्मक अपील के साथ-साथ तार्किकता और ऐतिहासिक दृष्टि भी विद्यमान है। वे किसी विशेष वर्ग या बौद्धिक समुदाय के लिए नहीं, बल्कि जनसामान्य के लिए लिखते थे, जिससे उनका साहित्य व्यापक स्तर पर प्रभावी सिद्ध हुआ।

वास्तव में, चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का साहित्यिक योगदान न केवल दलित साहित्य की धारा को समृद्ध करता है, बल्कि सामाजिक चेतना, इतिहास दृष्टि और वैचारिक आत्मनिर्भरता के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

डॉ. आंबेडकर और बौद्ध धारा से संवाद:

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का डॉ. भीमराव आंबेडकर और बौद्ध धारा के साथ गहरा संवाद था, जो उनके विचारों और लेखन में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। जिज्ञासु ने आंबेडकर के नेतृत्व में दलितों के सामाजिक और राजनीतिक उत्थान के प्रयासों का समर्थन किया और बौद्ध धर्म को एक प्रभावी सामाजिक मुक्ति का माध्यम मानते हुए उसे दलित समाज के लिए एक आदर्श धर्म के रूप में प्रस्तुत किया। उनका बौद्ध धर्म के प्रति झुकाव केवल धार्मिक नहीं था, बल्कि यह सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन की आवश्यकता से उत्पन्न हुआ था।[7] नवबौद्ध आंदोलन में जिज्ञासु की भागीदारी एक महत्वपूर्ण मोड़ था। जब डॉ. आंबेडकर ने बौद्ध धर्म को अपनाया और उसे दलित समाज के लिए मुक्ति का एक रास्ता बताया, तो जिज्ञासु ने इस विचारधारा को समृद्ध करने के लिए अपनी भूमिका निभाई। उन्होंने बौद्ध धर्म को केवल धार्मिक आस्था के रूप में नहीं, बल्कि एक सामाजिक क्रांति के रूप में देखा, जो जातिवाद, भेदभाव और असमानता के खिलाफ खड़ा होता है। उनका मानना था कि बौद्ध धर्म सामाजिक न्याय, समानता और करुणा के सिद्धांतों को साकार करने का सबसे सशक्त माध्यम है। आंबेडकरवादी सोच से जिज्ञासु की सहमति थी, लेकिन वे उसमें कुछ आलोचनात्मक विस्तार भी करते थे। जिज्ञासु ने आंबेडकर द्वारा प्रस्तुत बौद्ध धर्म को दलितों के आत्मगौरव, इतिहास और संस्कृति के पुनर्निर्माण के रूप में देखा, लेकिन उन्होंने आंबेडकर के विचारों में कुछ पहलुओं पर और अधिक विचार करने की आवश्यकता महसूस की। वे मानते थे कि बौद्ध धर्म केवल एक सांस्कृतिक बदलाव नहीं, बल्कि एक सामाजिक और मानसिक क्रांति का भी प्रतीक होना चाहिए।[8] उनका यह दृष्टिकोण दलितों के लिए बौद्ध धर्म को एक जीवनशैली और संघर्ष के रूप में प्रस्तुत करता था, जो सामाजिक रूप से सशक्त बनने के लिए आवश्यक था। बौद्ध धर्म को सामाजिक मुक्ति के एक प्रमुख माध्यम के रूप में देखने की जिज्ञासु की दृष्टि ने उन्हें न केवल एक धार्मिक विचारक, बल्कि एक सामाजिक आंदोलनकारी भी बना दिया। वे मानते थे कि बौद्ध धर्म दलितों के लिए सिर्फ एक धर्म नहीं है, बल्कि यह उनके जीवन में सामाजिक समता, आत्मसम्मान और न्याय की प्रक्रिया को स्थापित करने का एक प्रभावी तरीका है। वे बौद्ध धारा को दलितों के लिए एक प्रेरणा और शक्ति स्रोत मानते थे, जिससे वे अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर सकें और समाज में सम्मान की स्थिति प्राप्त कर सकें।

वस्तुत, जिज्ञासु का डॉ. आंबेडकर और बौद्ध धारा से संवाद केवल धार्मिक या दार्शनिक विमर्श तक सीमित नहीं था, बल्कि यह समाज में व्याप्त असमानताओं और शोषण के खिलाफ एक ठोस सामाजिक आंदोलन का हिस्सा था।

समकालीन प्रासंगिकता :

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का कार्य और चिंतन न केवल उनके समय के लिए महत्त्वपूर्ण था, बल्कि आज के सामाजिक-राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में भी अत्यंत प्रासंगिक है। जातिवाद, सामाजिक असमानता, ऐतिहासिक अन्याय और सांस्कृतिक वर्चस्व की चुनौतियाँ आज भी भारतीय समाज में विद्यमान हैं। ऐसे समय में जिज्ञासु की वैचारिक विरासत नई पीढ़ी को सामाजिक चेतना, आत्मगौरव और वैकल्पिक विमर्श की ओर प्रेरित करती है। आज के दौर में दलित विमर्श एक सशक्त बौद्धिक और सामाजिक आंदोलन का रूप ले चुका है। इस विमर्श की नींव रखने वालों में चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का नाम अग्रणी है। उन्होंने इतिहास को वंचितों की दृष्टि से लिखा, जिससे दलित समाज को अपने गौरवशाली अतीत की जानकारी मिली। उन्होंने यह दिखाया कि भारतीय इतिहास केवल सवर्ण शासकों और धर्माचार्यों की गाथा नहीं है, बल्कि उसमें श्रमिक, किसान, आदिवासी और दलित समाज की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।[9] यह दृष्टिकोण आज भी इतिहास लेखन की वैकल्पिक पद्धति के रूप में प्रेरणा देता है, जहाँ वंचितों की उपस्थिति को पुनर्स्थापित किया जा रहा है। शिक्षा के क्षेत्र में भी जिज्ञासु की सोच अत्यंत प्रासंगिक है। उन्होंने शिक्षा को केवल रोजगार का साधन नहीं माना, बल्कि सामाजिक मुक्ति और आत्मसम्मान की कुंजी बताया। वर्तमान में, जब शिक्षा प्रणाली में जातीय भेदभाव, अवसरों की विषमता और सांस्कृतिक दमन की प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं, तब जिज्ञासु की विचारधारा हमें शिक्षा के मानवीय और न्यायपूर्ण उद्देश्य की याद दिलाती है। उनका ज़ोर इस बात पर था कि शिक्षा ऐसी हो जो शोषित वर्गों को अपनी अस्मिता पहचानने, संगठित होने और शोषण के विरुद्ध खड़े होने की शक्ति दे। राजनीतिक दृष्टि से भी जिज्ञासु का चिंतन आज के सामाजिक आंदोलनों और जनसंघर्षों को दिशा देने वाला है। वे केवल सत्ता परिवर्तन में विश्वास नहीं रखते थे, बल्कि सामाजिक चेतना के जागरण को प्राथमिकता देते थे। वे मानते थे कि जब तक मानसिक दासता बनी रहेगी, तब तक कोई भी राजनीतिक परिवर्तन स्थायी नहीं होगा।[10] आज जब सामाजिक न्याय की अवधारणाएँ विभिन्न राजनीतिक एजेंडों का हिस्सा बनी हैं, तब जिज्ञासु की यह चेतावनी महत्त्वपूर्ण है कि केवल कानून बदलने से समाज नहीं बदलता, इसके लिए मानसिक और सांस्कृतिक परिवर्तन भी आवश्यक है। युवा पीढ़ी और शोधकर्ताओं के लिए चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु एक प्रेरणास्त्रोत हैं। उन्होंने सीमित संसाधनों में रहकर लेखन, संगठन और जागरूकता के कार्य किए। उनके जीवन और विचार हमें यह सिखाते हैं कि अगर संकल्प और दृष्टि स्पष्ट हो, तो सामाजिक परिवर्तन संभव है। आज के युवाओं को उनके कार्यों से यह प्रेरणा मिलती है कि वे भी सामाजिक न्याय, समता और इतिहास की पुनर्रचना के कार्य में सक्रिय भागीदारी निभा सकते हैं।

इस प्रकार, चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु की वैचारिक विरासत आज भी सामाजिक चेतना, दलित मुक्ति और समता आधारित समाज के निर्माण में अत्यंत उपयोगी और मार्गदर्शक सिद्ध होती है।

निष्कर्ष :

चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु एक बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे, जिनके चिंतन और कर्म ने दलित समाज के बौद्धिक, सांस्कृतिक और सामाजिक पुनरुत्थान को एक नई दिशा प्रदान की। वे केवल एक लेखक या इतिहासकार नहीं थे, बल्कि एक विचारक, समाज सुधारक और जनजागरण के पुरोधा थे। उनके चिंतन में सामाजिक यथार्थ की तीव्र समझ, ऐतिहासिक अन्याय के विरुद्ध संघर्ष और सामाजिक समता के प्रति गहरी प्रतिबद्धता दिखाई देती है। उन्होंने अपने लेखन, संगठनात्मक कार्यों और विचारधारा के माध्यम से शोषित समाज को आत्मनिर्भर बनने की राह दिखाई। जिज्ञासु का कार्यक्षेत्र व्यापक था–उन्होंने इतिहास लेखन को वंचितों की दृष्टि से पुनर्परिभाषित किया, शिक्षा को सामाजिक मुक्ति का औजार बताया, बौद्ध धर्म को दलित चेतना के सांस्कृतिक पुनर्निर्माण का साधन बनाया, और आत्मसम्मान एवं आत्मगौरव को दलित समाज की केंद्रीय चेतना के रूप में स्थापित किया। उन्होंने यह स्थापित किया कि जब तक समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़े व्यक्ति को उसकी गरिमा और अधिकार नहीं मिलते, तब तक किसी भी प्रकार का राष्ट्रीय विकास अधूरा है। इस शोध आलेख के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु एक ऐसे विचारक थे जिन्होंने दलित समाज के लिए एक वैकल्पिक विचारधारा का सृजन किया। वे इतिहास को केवल अतीत का विवरण नहीं मानते थे, बल्कि एक सक्रिय सामाजिक उपकरण के रूप में देखते थे, जिससे वर्तमान की चुनौतियों से निपटा जा सकता है। उनके लेखन में जो तार्किकता, सामाजिक यथार्थ और मानवीय संवेदना मिलती है, वह उन्हें केवल एक लेखक नहीं, बल्कि एक समाज निर्माता के रूप में प्रतिष्ठित करती है। जिज्ञासु की वैचारिक विरासत आज के सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य में अत्यंत प्रासंगिक है। जिस प्रकार आज भी जातिवाद, भेदभाव, सांस्कृतिक दमन और ऐतिहासिक अन्याय के रूप बदलकर सामने आ रहे हैं, उसमें जिज्ञासु के विचारों से मार्गदर्शन प्राप्त किया जा सकता है। उन्होंने जिन मूल्यों–समता, न्याय, आत्मनिर्भरता और आत्मगौरव–को केंद्र में रखा, वे आज भी सामाजिक आंदोलनों के मूल स्वरूप में विद्यमान हैं। भविष्य की दृष्टि से देखा जाए तो जिज्ञासु के विचार नई पीढ़ी के लिए एक प्रेरणा स्रोत बन सकते हैं। उनका चिंतन शोध, शिक्षा, साहित्य, और सामाजिक कार्यों में वैकल्पिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए आधार प्रदान करता है। दलित चेतना को केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि बौद्धिक और संगठनात्मक रूप देने का उनका प्रयास आज के सामाजिक परिवर्तन के आंदोलनों के लिए एक सशक्त मॉडल प्रस्तुत करता है।

संदर्भ सूची :

01. चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु, "दलितों का भविष्य", प्रकाशक: दलित साहित्य प्रकाशन, 1985, P-67

02. यादव, रामनारायण. "चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु का जीवन और शिक्षा." भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका, खंड 15, अंक 3, 2020, पृष्ठ 58.

03. अजय नवल,"दलित साहित्य का इतिहास", प्रकाशक: वाणी प्रकाशन, 2004, P-123

04. चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु ग्रंथावली, खंड-1 संपादक-कवल भारती, द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017

05. वही

06. डॉ. सुभाष कश्यप, "भारतीय संविधान और सामाजिक न्याय", प्रकाशक: लोटस प्रकाशन, 2010. , P-93

07. गुप्ता, रीता। *हिंदी दलित निबंध: वैचारिक उभार*। भोपाल: भारतीय साहित्य अकादमी, 2020। पृ. 116

08. राहुल संकृत्यायन, "जाति व्यवस्था और भारतीय समाज", प्रकाशक: राजकमल प्रकाशन, 2015 , P-102

09. वही

10. यादव, महेश। *दलित साहित्य के पुरोधा: चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु*। वाराणसी: संकल्प प्रकाशन, 2018। पृ. 74.

गुप्ता, प्रीति. "शिक्षा और समाज: चंद्रिका प्रसाद जिज्ञासु के विचार." समकालीन शिक्षा परिदृश्य, खंड 8, अंक 2, 2020, पृष्ठ 90.